अखंड भारत का जाप करने वाले ही इसे खंडित करने पर तुले हैं

कट्टरपंथी बिल्कुल नहीं चाहते भारत-पाक की जनता के बीच मधुर संबंध हों

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी बिन बुलाये नवाज शरीफ़ का जन्मदिन मनाने उनके घर पहुंच जाय तो कोई दिक्कत नहीं लेकिन नवजोत सिंह सिद्धू अगर अपने बहुत पुराने खिलाड़ी मित्र इमरान के शपथ ग्रहण समारोह में चला गया तो संघियों ने आफ़त मचा दी। ज़्यादा तकलीफ़ पाकिस्तानी जनरल बाजवा से गले मिलने पर हुई थी। यदि गले न मिलकर केवल हाथ मिला लेते तो क्या तकलीफ़ नहीं होनी थी? संघियों के मुताविक तो तमाम प्रॉटोकॉल तोड़ कर वहां बुत बने रहना चाहिये था।

उक्त मामला अभी ठंडा भी नहीं हुआ था कि सिद्धू की पाकिस्तान के सम्बन्ध में कही गयी एक बात को लेकर संधियों ने फ़िर तुफ़ान खड़ा कर दिया है। दिनांक 13 अक्तूबर को हिमाचल के सांस्कृतिक समारोह में सिद्धू ने केवल इतना कहा था कि पाकिस्तान की संस्कृति, बोल-चाल, खान-पान व रहन-सहन बिल्कुल उनके (पंजाब) जैसा है जबकि दक्षिण भारत का सब कुछ उनसे भिन्न है। इस नाते वे (पंजाबी)उनके ज़्यादा नजदीकी हैं।

उसमें सिद्धू ने गलत क्या कह दिया 15 अगस्त 1947 से पहले यह सारा पंजाब एक ही तो था। अंग्रेजों व सत्ता के भूखे कुछ नेताओं की चालबाज़ी के चलते उस पंजाब में एक लकीर खींच कर कह दिया गया कि उधर का पंजाब अब पाकिस्तान हो गया है तो क्या इससे सांझी संस्कृति, बोल-चाल व खान-पान आदि सब कुछ बदल जायेगा? नहीं कभी नहीं। दोनों देशों के हुक्मरानों के तमाम भड़काउ एवं ज़हरीले प्रचार के बावजूद, इस पंजाब व उस पंजाब की जनता के बीच आज भी असीम प्यार व दोस्ताना माहौल है। इसका जीता-जागता उदाहरण कुछ वर्ष पूर्व चंडीगढ में उस वक्त देखने को मिला था जब एक क्रिकेट मैच के बहाने पाकिस्तान से आये लोग़ों का चंडीगढ वासियों ने बांहे फ़ैला कर गले लगा कर स्वागत किया था। रेस्तरां वालों ने खाना तक मुफ़्त खिलाया था। क्या वे सब आईएसआई के एजेंट थे?

दक्षिण भारतीयों की अपेक्षा पाकिस्तानी (पंजाबी) स्वाभाविक तौर से हमारे नज़दीकी हैं। इसका अनुभव मुझे 1984 में उस वक्त हुआ था जब ब्रिटिश लेबर पार्टी के निमन्त्रण पर मैं लंडन गया था। मेरे साथ एक बैंगलोर व एक मद्रास से भी था। हम तीनों अच्छे मित्र थे। लेकिन लंदन की उस कांफ्रेस में अन्य देशों के अलावा जो पाकिस्तानी आये थे, उन्हें मैंने हर लिहाज से अपने ज्यादा नज़दीक पाया। कोई लाहौर से था तो कोई सियालकोट से। उनसे बतियाने में तो अपनापन था ही खाना-पीना भी एक जैसा था। पुराना इतिहास एवं विरासत भी सांझी थी। नजदीकियां बढाने के लिये यह सब काफ़ी था। वे लोग भी ठीक हमारी तरह बल्कि हमसे कहीं ज्यादा अपने हुक्मरानों व कठमुल्लों के शोषण से दुखी थे, वे भी शोषण से मुक्ति चाहते थे और आज भी चाहते हैं।

वर्ष 1996 में क्रिकेट बर्ल्ड कप के बहाने मुझे भी लाहौर जाने का मौका मिला। वीज़ा बेशक चार दिन का ही मिला था लेकिन वहां के दोस्तों ने 12 दिन से पहले आने ही नहीं दिया। वहां के गृह सचिव से उन्होंने इसकी अवधि बढवा दी थी। उस दौरान मुझे लाहौर से लेकर चकवाल होते हुए मियांवाली तथा मुलतान होते हुए सादिकाबाद तक वहां की शहरी व ग्रामीण जनता से खूब खुल कर मिलने का मौका मिला था। जहां भी लोग़ों को मेरे भारतीय होने का पता चलता था वे प्यार से बांहे फ़ैला कर गले मिलते थे और पूछते थे उनके वतनी (पाकिस्तान से भारत गये) लोग कैसे हैं। फ़रीदाबाद वालों के बारे में खासतौर पर।

ज़िला चकवाल के गांव भौन में एक 80 वर्षीय महिला की आंखों में हमें देख कर आंसू आ गये। उन्हें अपने गांव की वह खुशहाली याद आ गयी जो विभाजन से पहले की थी। उन्होंने बताया कि उस वक्त यह गांव सुविधाओं के हिसाब से किसी शहर से कम नहीं था। यहां डॉक्टरानियां, मास्टरानियां यानी महिला डॉक्टर व महिला शिक्षक थी जिनसे उनकी लड़कियां पढती थीं। अच्छा खासा बाज़ार था, सब उजड़ गया। उनका एक वाक्य 'कुंजा दुर गइयां हिलां आ गइयां' मुझे कभी नहीं भूलता। कुंज लम्बी गर्दन वाला सुंदर पक्षी होता है जिससे उन्होंने 1947 में भारत चले गये लोग़ों की तुलना की थी और हिल्लां यानी चीलों से उन्होंने भारत से वहां पहुंचे लोग़ों की तुलना में की थी।

दूसरा जुमला वहां के अधिकांश लोग़ों से सुना 'सानू तां ए फ़ौज तां मुल्ले खा गये' यहां मुल्ले से अभिप्राय कठमुल्लावाद से है। यानी फ़ौज व अंध धार्मिकता ने उन्हें बर्बाद कर दिया है। यदि वहां की जनता भी कठमुल्लावादी होती तो वहां मुस्लिम लीग राज कर रही होती, लेकिन उसे वहां कभी 5-7 से अधिक सीटें नहीं मिली। इसकी अपेक्षा पीपल्स पार्टी को जनता का समर्थन मिलता रहा, वह बात अलग है कि वह पार्टी भी उन्हें धोखा दे गयी। पाकिस्तानी जनता के कठमुल्ला विरोधी होने का ताज़ातरीन उदाहरण वहां के आतंकी हाफ़िज सैयद की शर्मनाक हार में देखा जा सकता है जिसके एक भी उम्मीदवार की जमानत तक नहीं बच पाई। वहां की बड़ी आबादी वैसी मुसलमान नहीं है जैसा कि हाफ़िज जैसे आतंकी चाहते हैं। ठीक ऐसे ही यहां के हिन्दू वै हिन्दू नहीं हैं जैसे कि संघी चाहते हैं। इसके बावजूद दोनों ओर के कट्टरपंथी साम्प्रदायिकता का ज़हर घोलने का पुरज़ोर प्रयास कर रहे हैं।

लाहौर के शादमान चौक का नाम भगत सिंह चौक

लाहौर की जिस जेल में शहीदे-आजम भगत सिंह को फ़ांसी लगाई गयी थी वहां अब वह जेल नहीं है। लगभग जिस जगह उन्हें फ़ांसी लगी थी वहां अब एक चौराहा है जिसका नाम शादमान चौक है। मार्च 1999 में मुझे एक बार फ़िर से लाहौर जाने का मौका मिला। इस बार मेरे साथ थे प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. लाल बहादुर वर्मा। उन्होंने शायद हिसाब लगा लिया था कि भगत सिंह के शहीदी दिवस 23 मार्च को हम वहीं होंगे। लिहाजा वे अपने साथ भगत सिंह का एक चित्र ले जाना नहीं भूले जिसे लाहौर वालों ने फ्रेम में जडवाया। इसी चित्र को रख कर 23 मार्च को एक बड़े होटल में हमने वहां के करीब 100-150 लोग़ों के बीच उनका शहीदी दिवस मनाया तो वहां के लोग़ों को अपना भूला हुआ सांझा इतिहास एवं विरासत याद हो आई।

उसके बाद से वहां लगातार भगत सिंह को न केवल याद किया जाता है बल्कि शादमान चौक का नाम बदल कर भगत सिंह के नाम पर रखने की बाकायदा एक मुहिम चल गयी। हुकूमत ने आधिकारिक तौर पर इस मांग को स्वीकार किया अथवा नहीं, इसकी तो पुख्ता जानकारी नहीं है लेकिन जनता ने उसे शहीद भगत सिंह चौक मान लिया है। संघियों अथवा हाफ़िज सैयदों के नज़रिये से देखा जाय तो तमाम भगत सिंह समर्थक भारत के एजेंट हो गये।

इसी तरह जिस छोटू राम को जाट नेता बता कर मोदी ने उनका कद घटाने का प्रयास किया है वे जन्म से जाट जरूर थे लेकिन नेता वे तमाम किसानों के थे। मैंने खुद पाकिस्तान के जाट, ठाकुर, अहीर, गूजर आदि बुजुर्ग किसानों से बात की तो वे आज भी सर छोटू राम की माला जपते हैं। एक भारतीय से इतना प्यार करने के जुर्म में तो उन सब लोग़ों को देश द्रोही व भारत का एजेंट घोषित कर देना चाहिये जैसे संघी सिद्धू को कर रहे हैं। दरअसल अंग्रेज सियासत का यही तकाज़ा है कि दोनों देशों की जनता को एक दूसरे के विरुद्ध तान कर रखो ताकि उनके हथियार बिकते रहें।

- सतीश कुमार

इलाहाबाद शहर के वास्तविक संस्थापक थे सम्राट अकबर!

इलाहाबाद शहर के मूल संस्थापक अकबर थे। अकबर की देन से इलाहाबाद आज भी जिंदा है। मैं इलाहाबादियों से पूछता हूँ आज भी गंगा यमुना की बाढ़ से शहर को कौन बचाता है। अगर अकबर का बनवाये बांध न हो तो आज भी इलाहाबाद का अस्तित्व एक बरसात ही है।

जो इलाहाबाद को जानते हैं मैं उनसे पूछता हूँ अकबर के बांध के पहले इलाहाबाद में आबादी की संभावना कैसे रही होगी। गंगा-कछार के धरातल से भी नीचे है अल्लापुर अलोपीबाग बैरहना और तुलारामबाग टैगोरटाउन का धरातल। सिविललाइंस कटरा और मम्फोर्डगंज का कुछ हिस्सा ऊँचा है। भारद्धाज आश्रम और आनंद भवन के आसपास भी कुछ ऊँचे भूभाग है। यहाँ तब भी मुनियों के आश्रम रहे होंगे। लेकिन आबादी का कहीं कोई जिक्र नहीं है। इलाहाबाद वालों जो आपको दो महान नदियों की बाढ़ की विभीषिका से बचाता है वह निर्माण हुमायूँ के पुत्र अकबर का है। दारागंज से एलनगंज के बीच लगभग 2 किलोमीटर का बांध। जिसे आप अब केवल बांधरोड कहते हो। दूसरी ओर जमुना के तट को बांधा।

अकबर के पहले के मध्यकाल में उस इलाके में शासन और सत्ता के केन्द्र मानिकपुर जौनपुर और चुनार थे। अकबर ने संगम पर एक मजबूत किला बनवाकर और कोसम की जगह जंगलों वन और डूब वाली भूमि पर एक नगर संभव किया।

जिसे भी मेरी इस स्थापना पर आपत्ति हो वह बताए कि बांधों का चौतरफा घेरा जब न था तो गंगा का पानी बघाड़ा वाले कछार से और जमुना की ओर से शहर में दाखिल होने से कौन रोकता था।

आप नाम बदलो। हारे हुए लोगों और उनके नगरों के नाम बदले जाने की एक सामंती परम्परा रही आई है। लेकिन अकबर ने काशी, अयोध्या मथुरा हरिद्वार उज्जैन विन्ध्याचल मैहर चित्रकूट इन बड़े तीर्थों के नाम क्यों नहीं बदले? अगर काफिरों को नीचा दिखाना होता तो ये बदलाव व्यापक प्रभाव डालते। रोचक बात है कि किसी नदी का नाम नहीं बदला गया। किसी पहा? किसी झरने का नाम नहीं बदला गया। पूरे मुगल सरकार में । गंगा यमुना सरयू चंबल केन बेतवा बरुणा गंडक सोन घाघरा व्यास झेलम रावी सिंध चेनाब सुतलज जंमू तवी किसी नदी नाले का नाम नहीं बदला। हिमालय हरिद्वार से मंगाकर गंगा जल पीता रहा अकबर।

कितने कम दूरंदेश थे मुगल। अकबर तो पूरा मूर्ख था, सूर्यसहनाम रटने में लगा था। टोडरमल खत्री, बीरबल पाण्डे, मानसिंह कछवाहा को नवरत्न बनाकर सरकार चलाता रहा। हारे लोगों के भगवानों के प्रिय भगवान राम और सीता के नाम पर सिक्के जारी करना यह बताता है कि पराजितों के समूल नाश की मानसिक औकात नहीं थी उसमें। और उसका नवरत्न मानसिंह बरसाने में राधारानी का मंदिर बनवाता रहा। सरकार की नाक के नीचे। वह मंदिर आज भी मान मंदिर के नाम से मौजूद है। विधर्मियों की धार्मिक संस्थापनाएँ होती रहीं और अकबर तानसेन से रागरागिनी सुनता रहा।तुलसीदास राम का चरित गाते रहे उसके शासन में। सूर की कृष्ण लीला वृंदावन में चलती रही। पूरी भक्ति कविता गाई गई उस अकबर की सरकार में। उसे रोकना होता तो यह साहित्य सृजन रोकना था। उल्टे उसका एक प्रिय सिपहसालार कवि रहीम तो वैष्णव हो गया। पुष्टि मार्ग का अनुयायी। बीस भाषाओं का ग्यानी फारसी तुर्की अरबी संस्कृत का प्रकांड पंडित होकर ब्रज में बरवै और नीति के दोहे रचता रहा।

हारे लोगों की भाषा संस्कृति से प्रेम करने वाले मूर्ख थे सब मुगल। रहीम को फारसी से हिलना नहीं था और तुलसी सूर कुम्भन सबको दो थप्प? लगा कर आगरे से लेकर अगरोहा तक कहीं कैद रखना एक अपराजेय सम्राट के लिए इतना कठिन काम तो न रहा होगा। उसे जौनपुर में पुल नहीं बनवाना था। बस जौनाशाह की जगह हर नये पुराने निर्माण को अकबर द्वारा तामीर किया गया की मुनादी करवानी थी।

लेकिन तब उसके इंतकाल पर जौनपुर इलाहाबाद मीरजापुर बनारस शोक में न डूबते। यहाँ के बाजार हफ्तों अपने शहंशाह के जाने का मातम न मनाते। अकबर के समकालीन कवि बनारसीदास जैन के अर्धकथानक में अकबर के न रहने का शोक देखा जा सकता है। आप अकबर के संस्थापित शहर का नाम बदलो। लेकिन जन के मन से खुरचकर अकबर को मिटाने की क्या तरकीब निकालोगे?

नोट : 1-अकबर ने सियाराम सिक्का जारी किया। नीचे उसका चित्र नीचे दे रहा हूँ । अकबर के सिक्के की जानकारी मुझे पहली बार गीताप्रेस की कल्याण पत्रिका से मिली थी। वह अंक अभी भी मेरे पास है।

2-अकबर द्वारा इलाहावास या इलाहाबाद की नींव डालने का संदर्भ पृष्ठ भी यहाँ जोड़ दिया है। यह प्रयाग प्रदीप नामक किताब का एक पृष्ठ है। जो मूल रूप से इलाहाबाद का एक जीवंत और प्रमाणिक इतिहास है। इसके लेखक श्री सालिग्राम श्रीवास्तव जी हैं। यह किताब 1937 में हिंदुस्तानी अकादमी से प्रकाशित है। यहाँ दिए पृष्ठ में तीन लाल निशान वाले स्थान देखें।

1- "गंगा यमुना के बीच की सुरक्षित भूमि" नगर नहीं भूमि।

2- प्रयग में ठहरा जिसे लोग प्राय: "इलाहाबास" कहते थे।

और

3- और प्रयाग में जहाँ गंगा यमुना का जल एक साथ पहुँचता है, एक नगर की नींव डाली और कुछ किलों को भी बनवाया।

तथ्य यही है कि प्रयाग एक तीर्थ भर था। यहाँ कुछ मंदिर और पुजारी थे। मुनियों के आश्रम ते। लेकिन कोई नगर न था। नगर की नींव सम्राट अकबर ने डाली। उस भूभाग को "इलाहाबास" स्थानीय लोग कहते थे। वह इलावास की ही स्मृति थी जो बिगड़ कर इलाहाबास के रूप में बनी रही। अकबर ने नींव पूज कर नगर बसाया। आप उसके द्वारा स्थापित शहर का नाम बदल कर नगर का इतिहास बदल रहे हैं। यह अन्याय है। अराजकता है। कुराज है। अनैतिहासिक कदम है।

- बोधिसत्व

त्योहार को मजहब से मत मिलाइये

बचपन में दशहरे की हमें जो कहानी सुनाई गई थी, उसके मुताबिक़ इस रोज़ रामजी ने रावण को मारा था इसलिए सभी लोग आज के दिन दशहरा मनाते हैं । हमारा रेडिओ टीवी इसी कहानी को हमें बताते थे ।

इस दिन भारत के राष्ट्रपति और प्रधान मंत्री भी राष्ट्र को बुराई पर अच्छाई की जीत के प्रतीक पर्व की बधाई देते थे। हम मानते थे कि पूरे भारत में एक जैसी संस्कृति होगी, सभी लोग हमारे जैसे ही धर्म मानते होंगे, हमारी तरह ही त्यौहार मनाते होंगे।

जब मैं बड़ा हुआ तो अपने शहर से बाहर निकला। और मुझे भारत की अलग अलग जगहों में जाने का मौका मिला तो मेरी बचपन की धारणाएं पूरी तरह टूटने लगी। मुझे पता चला कि मेरी जैसी भाषा सिर्फ मेरे शहर के लोग बोलते है। मुज़फ्फर नगर वाली बोली पड़ोस के जिले मेरठ से अलग है। और हमारी बोली अगर दिल्ली में बोलो तो लोग हंसते हैं।

मुझे बस्तर जाकर आदिवासियों के बीच रहने का मौका मिला। वहाँ के आदिवासियों को तो राम नामके किसी बंदे का कोई पता ही नहीं था। बस्तर में दशहरा होता था जिसमें गाँव वाले अपने देवी देवताओं की सवारियां निकालते हैं। रावण का पुतला जलाना या किसी राम नाम के राजा की जीत की कोई कहानी यहाँ के दशहरे में किसी ने सुनी भी नहीं थी।

इसी तरह जब मुझे मैसूर जाने का मौका मिला तो वहाँ भी दशहरा देखा। लेकिन मैसूर के दशहरे में भी रावण और राम वाला किस्सा कोई नहीं जानता। इसी तरह हिमाचल प्रदेश के कुल्लू के दशहरे में भी स्थानीय देवी देवताओं की सवारियां निकलती हैं राम रावण वाली कहानी यहाँ भी कोई नहीं कहता।

असल में भारत के जितने भी त्यौहार हैं वो सभी किसानी से जुड़े हुए त्यौहार हैं। दिवाली खरीफ की फसल पकने की खुशी में मनाया जाता है। इसी तरह आदिवासी इलाकों में देव दिवाली मनाई जाती है। और चूंकि आदिवासी कोई त्यौहार अमावस्या को नहीं मनाते इसलिए आदिवासी अपनी देव दिवाली पूर्णिमा के दिन मनाते हैं।

दशहरा अक्टूबर में मनाया जाता है इस समय बारिशें बंद हो चुकी होती हैं। घरों में बंद रह कर परेशान लोग मिलने जुलने खाने पीने का काम करते थे एक दूसरे के घर जाते थे मेले लगते थे।

दशहरा उस समय में मनाया जाता है जब खरीफ की फसल कटाई में अभी कुछ समय होता है, फसलों की घास निकालने का समय समाप्त हो चुका होता है। इसी तरह होली रबी की फसल पकने की खुशी में मनाया जाता है।

इतना ही नहीं सारी दुनिया में जितने भी त्यौहार हैं उनका सम्बन्ध वहाँ के मौसम और किसानी से जुड़े हुए होते हैं।

बड़ा दिन जीसस के जन्म से पहले से मनाया जाता था। जब यूरोप में बर्फ पड़ जाती है और सब लोग घरों में बंद हो जाते हैं। तब किसान लोग एक दुसरे के घर पर जमा होते थे और साथ में मिलजुल कर खानापीना करते थे।

ईद का त्यौहार मोहम्मद के पहले से मनाया जाता था। मजहब की इजाद बाद में हुई इंसान ने किसानी पहले शुरू करी। बाद में किसानी से जुड़े हर काम को मजहब की कहानियों से जोड़ने का काम हुआ।

त्यौहार के मौके पर नाचे, गाये, खाये-पिये, मिलिए- जुलिये। लेकिन किसी को नीचा मत दिखाइये, किसी से नफरत मत करिये।

त्यौहार और मज़हब को आपस में मत मिलाइए।

- हिमांशु कुमार